अध्ययन सामग्री
विषय- हिन्दी
सेमेस्टर- चतुर्थ(04) स्नातकोत्तर
प्रश्न पत्र- चतुर्दश(cc-14)
रस निष्पत्ति सम्बन्धी प्रमुख सिद्धांत
पदनाम- डॉ स्मिता जैन
एसोसिएट प्रोफेसर
हिंदी विभाग
एच डी जैन कॉलेज, आरा
10:24

Scanned with CamScanner

प्रश्न → रस निष्पत्ति संबंधी प्रमुख सिद्धांतों का परिचय दीजिए। इनमें सर्वाधिक मान्य मत कौन है और क्यों?

उत्तर → रस का विवेचन रस-निष्पत्ति से आरम्भ होता है। भरतमुनि ने अपने नाट्यशास्त्र के एक सूत्र में रस की परिभाषा दी है जो इस प्रकार है —

"विभावानुभाव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः"।

अर्थात् विभाव, अनुभाव और व्यभिचारी के संयोग से रस-निष्पत्ति होती है। इसमें 'संयोग' और 'निष्पत्ति' ऐसे शब्द हैं, जिनकी व्याख्या भिन्न-भिन्न आचार्यों ने भिन्न-भिन्न प्रकार से की है और उनसे रस-सम्बन्धी भिन्न-भिन्न मत स्थापित हो गए हैं। उनमें चार प्रमुख हैं —

(1) आरोपवाद
(2) अनुमानवाद
(3) भोगवाद
(4) अभिव्यक्तिवाद

निष्पत्ति का अर्थ भरतमुनि के अनुसार है बनना या होना, स्वरूप को प्राप्त करना। संयोग का अर्थ है — स्थायी भावों के साथ सम्यक् योग संगम। इसप्रकार भरतमुनि का संयोग से अर्थ 'सहसंयोजन' है तथा 'निष्पत्ति' से अर्थ स्थिति है। अतः भरतसूत्र का स्वयं भरतमुनि के अनुसार अर्थ हुआ —

"विभाव, अनुभाव और व्यभिचारी भावों का स्थायी भावों के साथ संसर्ग होने से रस की स्थिति प्राप्त होती है।" इनके अनुसार रस ऐसा नूतन पदार्थ नहीं है, जिसका पहले सर्वथा अभाव रहता है —

"नाना भावोपगता अपि स्थायिनो भावा रसत्वमाप्नुवन्ति।"

भट्टलोल्लट का आरोपवाद → अन्य वस्तु में अन्य वस्तु के धर्म की बुद्धि लाने का नाम आरोप है। अभिप्राय यह कि एक वस्तु को दूसरी वस्तु मान लेना, जो यथार्थ में नहीं है। इनके मत में संयोग शब्द का अर्थ है — सम्बन्ध जो तीन प्रकार का होता है।

Scanned with CamScanner

उत्पाद्योत्पादक भाव,
गम्यगमक भाव
पोष्यपोषक भाव

निष्पत्ति शब्द के तीन अर्थ हैं — उत्पत्ति, अभिव्यक्ति और पुष्टि। विभाव उत्पाद्य-उत्पादक संबंध से रस को उत्पन्न करते, अनुभाव गम्यगमक भाव से रस को अभिव्यक्त करते और व्यभिचारी पोष्यपोषक भाव सम्बन्ध से रस को पुष्ट करते हैं।

दुष्यन्त और शकुन्तला का अभिनय करनेवाले नट यथार्थतः वे नहीं होते। उन दोनों का जो परस्पर प्रेम था वह उन्हीं में था, वह नटों में कभी संभव नहीं। अतः वे दोनों अनुकार्य हैं और नट अनुकर्ता। विभावादि के आकर्षक अनुभव में कुशल दुष्यंत आदि के अनुकर्ता नटों पर और सुन्दर ढंग से काव्य पढ़नेवाले व्यक्ति पर उनका आरोप कर लेते हैं। अतः यह रसप्रतीति आरोप-ज्ञान-जन्य है। अतः यह आरोपवाद है।

शंकुक का अनुमानवाद →

शंकुक का मत न्यायशास्त्रानुमोदित है। इन्होंने रस की वस्तुगत और अनुभूतिगत - दोनों प्रकार की व्याख्या की है। उनके मत से संयोग का अर्थ अनुमाप्य-अनुमापक सम्बन्ध है और निष्पत्ति का अर्थ अनुमिति का अनुमान है।

सामाजिक अभिनेताओं में दुष्यन्त आदि की अभिन्नता का अनुभव करते हुए नाटक के पात्रों में विभाव आदि के द्वारा दुष्यन्त आदि का अनुमान कर लेते हैं न कि आरोप। सामाजिकों की यही अनुमिति-ज्ञान रसबोध का कारण होता है।

शंकुक ने वैसे तो नट को ही माध्यम माना है, परन्तु उनका सिद्धान्त लोल्लट से कुछ भिन्न है। शंकुक के अनुसार सहृदय नट में नायक के गुणों का अनुमान कर लेता है। यह अनुमान चार प्रकार का होता है —

Scanned with CamScanner

सम्यक, मिथ्या, संशय और सादृश्य। शंकुक ने अनुमान को इन चारों से भिन्न माना है। 'अभिनयानुकृति' न तो मिथ्याज्ञान है, न संशय है, न वास्तविक है, न सादृश्य है, वरन् वह तो सामान्य प्रतीति भेदों से भिन्न, वास्तविक प्रतीति से विलक्षण ही एक कलात्मक प्रतीति है। चित्र में स्थित घोड़ा वास्तविक न होते हुए भी हम उसे घोड़ा कहने का निषेध नहीं कर सकते, इसी प्रकार नट में मूलपात्र की स्थिति न होते हुए भी हम उसे मूलपात्र कहने का निषेध नहीं कर सकते।

भट्टनायक का भोगवाद →

भरतसूत्र के तीसरे व्याख्याता भट्टनायक का मत सांख्यशास्त्र के सिद्धान्त के अनुकूल है। शंकुक का यह विचार कि रस का अनुमान होता है, उन्हें उचित प्रतीत नहीं हुआ। कारण यह कि आनन्द प्रत्यक्ष अनुभव का विषय है, न कि अनुमान का।

एक व्यक्ति में उद्भूत रस का आस्वादन अन्य व्यक्ति में अनुमान द्वारा नहीं हो सकता। रति आदि भाव की सुन्दरता के या चमत्कार के अनुमान से आनंद उपलब्ध हो जा सकता है - यह कल्पना असंगत है। क्योंकि नाटक के पात्रों में न तो रस का अनुमान होता है और न अनुमान से सामाजिकों में रस ही प्रतीत होता है। वास्तव में उन्हें भोगात्मक आनन्द होता है। इनके मत में वे संयोग का अर्थ भोज्य-भोजकभाव सम्बन्ध है और निष्पत्ति का अर्थ भुक्ति या भोग है। विभावादियों के इस संबंध से रस की निष्पत्ति होती है।

अभिनवगुप्त का अभिव्यक्तिवाद →

भरतसूत्र के चौथे व्याख्याकार अभिनवगुप्त हैं। उन्होंने अपने पूर्ववर्ती तीनों व्याख्याकारों के मत को उद्धृत करके अपना मत दिया है। उन्होंने निष्पत्ति का अर्थ अभिव्यक्ति माना है।

उनका कहना है कि रस वस्तुतः अभिव्यक्त होता है, स्थायी भाव वासना रूप से मन में सुप्त रहते हैं और

विभावादि की सहायता से जाग्रत और पुष्ट होकर रस रूप में अभिव्यक्त हो जाते हैं।

काव्य के पठन-पाठन तथा नाटक-सिनेमा के दर्शन से, अर्थात् काव्यनाटकों के विभावादि व्यंजकों से अर्थात् से सामाजिकों के हृदयस्थ रति आदि की अव्यक्त वासना वैसे ही अभिव्यक्त हो जाती है फूट पड़ती है जैसे मिट्टी के पके हुए पात्र में पहले से ही वर्तमान गंध जल की छींटों के संयोग से व्यक्त हो जाती है। रस की उत्पत्ति नहीं होती, बल्कि अव्यक्त भाव की अभिव्यक्ति होती है। वासना का जाग्रत होना रसास्वा

समीक्षा →

इन चारों व्याख्याकारों की रस-सूत्र सम्बन्धी व्याख्याओं का अध्ययन करने के पश्चात् यह स्पष्ट हो जाता है कि अभिनवगुप्त का अभिव्यक्तिवाद वाला सिद्धान्त ही सर्वश्रेष्ठ है।

भट्टलोल्लट ने अनुकार्य में रस की उत्पत्ति मानी है, उन्होंने सामाजिक को कोई स्थान नहीं दिया, जबकि रस की वास्तविक अभिव्यक्ति सामाजिक में ही होती है, यद्यपि अभिनेता भी रस में डूबकर ही अनुकरण करता है, फिर रस की उत्पत्ति मानना भी भ्रम है। जिस रस की उत्पत्ति अनुकार्य में जैसी होगी उसका वैसा ही प्रभाव दर्शक या पाठक पर होना चाहिए, पर करुण दृश्य देखकर भी वह आनन्दित होता है, अतः भट्टलोल्लट का मत उचित नहीं जान पड़ता।

शंकुक अनुमान के आधार पर सामाजिक में सहानुभूति की प्राप्ति मानते हैं। अनुमान का ज्ञान प्रत्यक्ष न होकर परोक्ष होता है, फिर अनुमान तो बुद्धि का विषय है, हृदय का नहीं और रसानुभूति हृदय से संबंध रखती है। अतः शंकुक का मत भी औचित्यपूर्ण नहीं है।

इसी प्रकार भट्टनायक ने जो दो व्यापारों भोजकत्व और भावकत्व की कल्पना की है, वे भी शास्त्रसम्मत नहीं हैं। दूसरे प्रतीति और भुक्ति का जो भेद उन्होंने किया है, वह भी गलत है — भुक्ति ही प्रतीति है। रस प्रतीति का खंडन

Scanned with CamScanner

कर रस-भुक्ति की स्थापना भी युक्तिसंगत नहीं लगती। फिर रस की उत्पत्ति और अभिव्यक्ति दोनों का ही निषेध कर देने से रस की सत्ता ही असिद्ध हो जाती है।

इसके विपरीत अभिनवगुप्त का अभिव्यक्तिवाद वाला सिद्धान्त सामाजिक की रसानुभूति पर आधारित है। इसके लिए उन्होंने साधारणीकरण के सिद्धान्त को स्वीकार किया है। अभिनवगुप्त ने ही सर्वप्रथम रस के एकान्त सहृदय-निष्ठ रूप की प्रतिष्ठा की। भट्टनायक तक उसके वस्तुपरक रूप की सत्ता विद्यमान रही। पर अभिनवगुप्त ने उसकी आस्वादरूपता का स्पष्टतः प्रतिपादन किया।

अभिनवगुप्त की सबसे बड़ी सिद्धि समष्टिगत रस की कल्पना है। उन्होंने रस-चक्र की पूर्णता आध्यात्मिक रस-चेतना के ही सिद्ध की है। यही कारण है कि मम्मट और पण्डितराज जगन्नाथ ने भी अभिनवगुप्त के मत को ही माना।

अतः अभिनवगुप्त का मत ही सर्वश्रेष्ठ है।

Scanned with CamScanner